# प्रथम अध्याय

# प्रथम अध्याय
# डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रस्तावना - डॉ. लाल हिंदी साहित्य जगत में एक अष्टपैलु व्यक्तित्व के रूप में जाने जाते हैं। उन्होंने साहित्य की विभिन्न विधाओं में अपनी प्रतिभा के दर्शन कराए है। उपन्यास, कहानी, नाटक, जीवनी, समीक्षा... आदि विधाओं में सफलता के साथ लेखन किया है लेकिन इन समस्त विधाओं में से उन्हें नाटक विधा में ज्यादा सफलता मिली इस लिए लाल को नाटककार लाल कहा जाता है। नाटक लिखा नहीं जाता, रचा जाता है की स्थापन करने वाले लाल ने हिंदी नाटक के उस युग को ही बदल डाला जहाँ पर नाटक का अर्थ उपन्यास और कहानी की तरह केवल लिखना रह गया था। लाल के व्यक्तित्व तथा कृतित्व संबंधी डॉ. रघुवंशजी कहते हैं कि "लाल एक सूर्यमुख रचनाकार हैं। सुर्यमुख वह जिसमें सदा नवोदय करने की सामर्थ्य हो। सूर्य सर्वकाल में एकमेव वही होकर भी, हर उषा में नव्यनूतन होकर सामने आते हैं।"[1] लाल एक ऐसे योद्‌धा थे जिन्होंने अपने जीवन में हार को कभी स्वीकार नहीं किया। निरंतर कठिनाइयों एवं संघर्षों का सामना करके अपने जीवन का चमन खिलाया।

### 1.1 डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल का जीवनवृत्त :

#### 1.1.1 जन्म और जन्म स्थान -

डॉ. लाल का जन्म उत्तर प्रदेश में जिला बस्ती के जलालपुर गाँव में 4 मार्च, 1927 को हुआ। जलालपुर गाँव प्राकृतिक परिवेश से उभरा हुआ है। गाँव के पास से ही 'कुआनो' और 'मनोरमा' जैसी नदियाँ बहती हैं। उन नदियों का पानी हमेशा कलकल निनाद करता हुआ बहता है और नदियों के आस-पास की कोमल हरियाली मन को मोह लेती है। लाल की जन्मभूमि में बहुरूपया, नोटंकी कठबोडवा, रामलीला, कृष्णलीला जैसे नाट्‌य प्रकार प्रचलित थे जिसको संस्कार बचपन से ही लाल के मानसपटल पर बने रहें।

इसलिए लाल का नाटकीय बोध जितना ही सूक्ष्म है उतना सहज भी। लगता है जैसे बचपन से ही उन्होंने जीवन को एक जन्मजात नाटककार की दृष्टि से देखा है। जीवन के सुख और दुःख द्‌वंद्‌व और संघर्ष, तड़प और पुलक, फूल और शूल से भरे प्रत्येक रूप और दृश्य को उन्होंने बारी-बारी मुग्ध और विस्मित आँखों से परखा है।[2] अतः लाल को अपने जीवन में सफलता प्राप्त करने में जिस तरह माता-

पिता के संस्कार हमेशआ पथ-प्रदर्शक बने उसी तरह अपनी जन्मभूमि तथा उसका परिवेश भी उपयोगी रहा।

**1.1.2 पारिवारिक जीवन -**

डॉ. लाल के पिता का नाम श्री शिवसेवक लाल तथा माँ का नाम मूँगादेवी था। अपने पिता की ये दूसरी संतान और मंझले पुत्र थे। उनके बड़े भाई का नाम बलदेव लाल था तथा छोटे भाई का नाम कमला लाल था। लाल को श्यामा व सावित्री नामक दो बहने थी। लाल की माँ बड़ी धार्मिक प्रवृत्ति की थी परिणामस्वरूप भक्ति के संस्कार लाल को अपनी माता मूँगादेवी से प्राप्त हुए।

लाल का परिवार आर्थिक अभावग्रस्त था अतः परिवार की हालत समस्या ग्रस्त थी। लाल के पिता शिव सेवक लाल ग्राम पटवारी थे और अपने परिवार का बोझ अकेले ढोते थे। परिवार की इस अवस्था से उभरने के लिए लाल के बड़े भाई बलदेव लाल ने हाईस्कूल पास करने के बाद नौकरी पकडी।

**1.1.3 वैवाहिक जीवन -**

लाल का विवाह कम उम्र में ही हुआ। केवल आठवी कक्षा पास होने के बाद सोलह वर्ष की आयु में ही लाल का विवाह फैजाबाद जिले के फरीदापुर गाँव के राजबहादुर की दूसरी पुत्री आरती के साथ हुआ। लाल अपने वैवाहिक जीवन से पूर्णतः संतुष्ट थे। वे हमेशा अपनी पत्नी की साथ घुल-मिलकर रहा करते थे।

लाल की पत्नी आरती अपने नाम की सार्थकता को कायम रखने में कामयाब रही उसने लक्ष्मीनारायण के जीवन पथ पर हमेशा रोशनी फैलाने का काम किया। एक आदर्श भारतीय नारी जैसे आरती ने लाल से कभी न किसी बात की शिकायत की और न उनके मार्ग में बाधा बनी, बल्कि लाल के प्रत्येक मार्ग की दीवार को दूर करके लाल के जीवन की आरती ही बनी रहीं। अतः लाल अपनी पत्नी आरती से और अपने वैवाहिक जीवन से संतुष्ट थे।

**1.1.4 आदर्श पिता डॉ लाल**

डॉ लक्ष्मीनारायण लाल एक आदर्श पिता है। लाल की तीन संताने हैं, बड़ा पुत्र आनंदवर्धन, पुत्री सरोजिनी तथा छोटा पुत्र अजयलाल। अपनी संतानों के वे स्नेहसिल पिता बने। संतानों की योग्य उम्र होने पर वे उनके पिता कम मित्र अधिक बने रहें। छोटे पुत्र अजय के लिए वे माँ और पिता दोनों का कर्तव्य निभाते रहे। क्योंकि अजय मानसिक तौर पर मंदबुद्धि का और भोलेभाला स्वभाव वाला था। अतः लाल का ध्यान अजय पर ज्यादा केंद्रीत रहता था। पुत्र अजय के साथ-साथ

पिता के स्नेह का प्रसाद पुत्री सरोजिनीलाल को भी मिला तूलना में बड़े पुत्र आनंदवर्धन को इतना स्नेह नहीं मिला। लाल की संतानों में से पुत्री सरोजिनी साहित्य जगत में पिता लाल के साथ काम करने में आनंदप्राप्ति का अनुभव करती थी। लाल ने अपनी संतानों को हमेशा आनंद कुशल रखने का प्रयास किया उन्होंने अपनी संतानों की बौद्धिक विकास की गति के साथ-साथ मानसिक विकास की गति का भी बराबर ध्यान रखा। एक आदर्श पिता होने के गुण लाल में भलिभांति विद्यमान थे। लाल ने अपनी संतानों को स्वाभिमान से जीवन जीने की हमेशा सलाह दी। इस संबंध में डॉ. सुभाष भाटिया कहते हैं कि लाल के स्वाभिमानी, निर्भीकता जैसे गुणों को अहंवादी कहना उनके साथ सरासर अन्याय होगा।" [3]

## 1.2 शिक्षा तथा कार्य

### 1.2.1 शिक्षा जगत -

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल की प्राइमरी शिक्षा बहादुरपुर ग्राम में हुई। उन्हें पढ़ाई करने का शौक अपने बड़े भाई बलदेवलाल के कारन लगा। बचपन में वे अपने भाई के पीछे-पीछे स्कूल जाया करते थे। इसी कारण बचपन से ही पढ़ाई करने की गहरी जिज्ञासा लाल के अंदर निर्माण हुई। प्राइमरी शिक्षा पूर्ण करने के बाद पिपरागौतम के मिडल स्कूल में प्रवेश लिया। आगे बस्ती के ऐंग्लो हाईस्कूल से आठवी कक्षा पास हुए। फिर वही पर स्थित सक्से रिया कॉलेज से सन 1946 में इण्टर की परिक्षा में पास हुए। लेकिन आगे पढ़ाने के लिए लाल के पिता इच्छुक नहीं थे क्योंकि उनके परिवार की हालत खस्ता थी। वे चाहते की लाला अब कोई नौकरी करे। "लेकिन आगे की पढ़ाई करने की गहरी लालसा लाल के अंदर रह-रहकर हिलोरे भर रही थी।"[4] अतः इस उन्माद को भले कैसे कोई रोक लेता? परिणाम यह हुआ कि घर में किसी को कुछ भी बताए बिना लाल चुपचाप इलाहाबाद पहुँचे।

कहा जाता है कि कोशिश करने वालों की हार नहीं होती। लाल जब इलाहाबाद विश्वविद्यालय में पहुँचते हैं तो वहाँ का प्रवेश बंद हो चुका था। अतः किसी भी स्थिति में वाइस-चान्सेलर से मिलना जरूरी था। फिर कई दिनों के चक्कर और संघर्षों के बाद वाइस चान्सेलर श्री अमरनाथ झा से भैंट हो गई। तब झा साहब गुस्से में बोले कि यह कोई समय है एडमिशन का, पत है एडमिशन कब के समाप्त हो गए हैं। और तुममें कौन से सूरखाब के पर लगे हैं जो इतने विलंब के बावजूद तुम्हें प्रवेश दिया जावे?[5] "इस बात पर लाल ने आत्मविश्वास से कहा कि "सर मौका आने पर यह दिखाया जा सकता है कि मुझमें कौन से सुरखाब के पर लगे हुए है।"

डॉ लाल विश्वविद्‌यालयीन छात्र जगत में पढ़ाई के साथ-साथ अन्य गतविधियों में हमेशा आगे रहे है। छात्र जगत में ही उनके द्‌वारा लिखित नाटक 'ताजमहल के आसूँ' ने उन्हें मशहूर बनाया और एक विद्‌यार्थी नाटककार के रूप में सभी की प्रशंशा के हकदार बने। इस संघर्ष-यात्रा में दुर्भाग्य से बी. ए. में तृतीय श्रेणी ही प्राप्त हुई। आगे हिंदी विषय लेकर एम. ए. किया लेकिन चाहकर भी एम. ए. में प्रथम श्रेणी प्राप्त न कर सके। फिर आगे अपनी पढ़ाई को कायम रखते हुए सन 1952 में डी. फिल. की उपाधि प्राप्त की। लाल ने अपने शोध-प्रबंध के लिए "हिंदी कहानियों की शिल्पविधि का विकास" यह विषय चुना था। लाल का शिक्षा जगत काफी संघर्षों से जूझता हुआ चरम सिमा तक पहुँच पाया है।

### 1.2.2 कार्यक्षेत्र

डॉ. लाल का कार्यक्षेत्र विविध मुखी रहा है। सन 1953 में लाल ने एम. एम. कॉलेज चंदोसी से अध्यापन का कार्य शुरू किया। एक वर्ष यहाँ अध्यापन किया, यहीं पर लाल को नाटक और अभिनय के अवसर प्राप्त हुए। सन 1955 में सी.एम. पी. कॉलेज, इलाहाबाद में हिंदी विभागाध्यक्ष के रूप में नियुक्त हुए। सन 1956 में लखनऊ रेडियो स्टेशन पर 'ड्रामा प्रौड्‌यूसर' बने। लेकिन तीन महिने में ही यह पद झोडकर वापस सी.एम.पी. कॉलेज में अध्यापन कार्य में जूटे। फिर आगे सन 1958 में श्री पुरूषोत्तमदास टण्डन कविवर पंत तथा उपेंद्रनाथ अश्क जैसे महानुभावों के साथ नाट्य केंद्र की स्थापना की। इस नाट्य केंद्र की उपयोगिता के विषय में भाटीया कहते हैं कि "इस नाट्‌य केंद्र के माध्यम से उन्होंने नाटक और रंगमंच को एक करने का भरसक प्रयास किया।" [6] फिर अपने कार्यक्षेत्र का विस्तार करते-करते सन 1964 में डॉ. लाल इलाहाबाद छोडकर दिल्ली आ गए।

डॉ. लाल ने सन 1964 में बुखारेस्ट की विदेश यात्रा की। इसमें भारत सरकार के प्रतिनिधि रूप में आंतरराष्ट्रीय नाट्‌य संगोष्ठी का प्रतिनिधित्व किया। विदेश यात्रा से वापस आने पर दिल्ली विश्वविद्‌यालय में व्याख्याता के रूप में नियुक्त हुए। यहाँ पर ही 4 मार्च, 1967 को अपने जन्म दिन की 40वीं वर्ष गाँठ के अवसर पर 'संवाद' नामक नाट्‌य संस्था की स्थापना की। लेकिन आगे सन 1970 में दिल्ली विश्वविद्‌यालय के प्राध्यापक पद का स्वेच्छा से त्याग कर सीधा घर लौटे। और घरवालों को आत्मविश्वास के साथ अपना निर्णय सुनाते हुए कहा कि "तुम लोग घबराओ मत, तुम लोगों को कोई परेशानी नहीं होगी। हम लोग पहले से भी अच्छी तरह से रहेंगे। आप नौकरी छोड़ने का निर्णय बदलने की बात करके मुझे कमजोर मत बनाना।" [7] फिर नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इंडिया' में सम्पादक के रूप

में कार्य किया। लेकिन कुछ ही दिनों में इस स्थान का भी त्याग किया और कलम की मजदूरी करने वाले 'कलम के मजदूर' बने। तब से लेखन को एक पेशा नहीं अपितु 'स्वधर्म' के रूप में स्वीकार किया। और तब से लेखन ही इनका विश्राम बना, तप बना, साधना बना। यह है इनके श्रम से आश्रम तक की यात्रा। डॉ. लाल कहते हैं कि एक है श्रम जो शरीर से होता है, दूसरा है परिश्रम जो शरीर और मन-बुद्धि से होता है और एक है 'आश्रम' जहाँ 'श्रम और परिश्रम' दोनों स्वत्म हो जाते हैं - यह आत्मा से जुड़कर होता हैं।" [8]

डॉ. लाल के संबंध में डॉ. रघुवंश कहते हैं "अन्यान्य अध्यापकों की भाँति उनका लेखन साहित्य समीक्षा से शुरू हुआ लेकिन साहित्य की परिभाषा से वह समीक्षा सीमित नहीं रह सकी, उत्तरोत्तर वह समीक्षा जीवन के विस्तार की दिशा में व्याप्त होती गई। परिणाम शीघ्र ही उन्हें सर्जनात्मक साहित्य में उतर आना पड़ा।" [9]

### 1.2.3 पुरस्कार एवं सम्मान

लाल ने अपनी प्रतिभा शक्ति के बलबुते पर देश में ही नहीं तो विदेश में भी अपना नाम रोशन किया। लाल ने विभिन्न अवसरों पर विदेश में बुखारेस्ट, ग्रीक, इटली, फ्रान्स, ब्रिटेन, कैम्ब्रिज, पेरिस, तथा टोरन्टो आदि अनेक देशों की यात्रा की। लाल ने देश तथा विदेश में अपनी लेखनी से अपना एक अलग अस्तित्व निर्माण किया। अतः उन्हें अपने जीवन में विभिन्न प्रसंगों पर अनेक पुरस्कार एवं सम्मान मिले हैं।

1967 - "रातरानी" नाटक पर 'आखिल भारतीय कालीदास' पुरस्कार।

1970 - "करफ्यू" नाटक पर 'अखिल भारतीय कालीदास पुरस्कार'।

1977 - उत्तर प्रदेश 'संगीत नाटक अकादमी' पुरस्कार।

1977 - हिंदी के प्रमुख नाटककार के रूप में 'राष्ट्रीय संगीत नाटक अकादमी' पुरस्कार।

1979 - हिंदी साहित्य के योगदान के उपलक्ष्य में साहित्य कला परिषद दिल्ली द्वारा पुरस्कृत।

1987 - 'गली अनार कली' उपन्यास पर 'हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा पुरस्कृत।

1988 - भारतीय नाट्य संघ द्वारा पुरस्कृत (मरणोपरांत)

डॉ. लाल के गुण गौरव को अभिव्यक्त करते हुए डॉ. गिरीश रस्तोगी कहते हैं .. "संपूर्ण रूप से डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल नाट्य, शिल्प, रंगमंच, कथानक के विषय और अपने चारों ओर के वातावरण परिस्थितियों - युग - जीवन के प्रति सजग नाटककार हैं।" [10]

### 1.3 लाल का व्यक्तित्व

#### 1.3.1 स्वाभिमानी व्यक्तित्व -

लाल का व्यक्तित्व परम स्वाभिमानी था लेकिन दुर्भाग्य की बात यह है कि लाल के इस परम स्वाभिमानी व्यक्तित्व वाले स्वभाव को कुछ आलोचक महोदय अह्मवादी तथा स्वकेंद्रित मानते हैं। लाल के व्यक्तित्व को सही तरह से परखने वाला उन्हें कतई अहंकारी नही बता सकता। लाल ने अपने जीवन में बड़े-बड़े पदों का त्याग किया है वे अगर अहंकारी, स्वार्थि होते तो एक ही पद पर चिपक जाते। लाल अगर अहंकारी होते तो जीवन में इतनी बड़ी उंचाई तक कतई नहीं पहुँचते। लाल का व्यक्तित्व स्वाभिमानी तो था ही साथ-साथ वे निड़र स्वभाव वाले थे। "जिसके बारे में जो कुछ भी लगता उसे मुँह पर कह देने वाले थे। यह भी नहीं कि कभी समय आएगा तो बात की जाए नहीं वे उसी वक्त कह देते थे।"[11] लाल के संपर्क में जो भी लोग आए उन्होंने उनके व्यक्तित्व के गुणों को अहंवादी नहीं तो स्वाभिमानी माना है।

लाल के व्यक्तित्व संबंधी नेमिशरण मित्तल कहते हैं "लक्ष्मीनारायण लाल की पिछले तीन चार साल में छपी कुछ पुस्कें देखी और फिर करीब से उनको खुद को देखा तो मुझे लगा कि मैं पुस्तकें नहीं एक शीशे में पड़ती हुई परछाई देख रहा हूँ लेखक के जीवन, चिंतन और दिमाग की। मुझे ऐसा लगा कि जैसे वे जीवन से भी ज्यादा आदमी के बीच में रखकर सोचते और लिखते हैं।"[12] अतः काल के इसी स्वाभिमानी भावना को अहंकारी भाव नहीं मानना चाहिए।

#### 1.3.2 हँसमुख व्यक्तित्व

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल एक "हसमुख तथा मिलनसार व्यक्तित्ववाले कर्ता पुरूष थे। लाल का रहन-सहन सिधा-सिधा था। वे प्रसंगानुकूल अपनी पेहराव में बदलाव करते थे उन्होंने सादी धोती से लेकर सूट-कोट तक नए-नए ढंग का पेहराव किया। खान-पान के मामले में भी लाल का कोई निश्चित सिद्धांत नहीं था। वे शुद्ध शाकाहारी भी थे तथा शुद्ध मांसाहारी भी थे। मांसाहारी में उन्हें मछली अधिक प्रिय थी। लाल समय आने पर अपना खाना खूद अच्छी तरह से पकाते थे।

लाल के हँसमुख तथा मिलनसार व्यक्तित्व संबंधी उनकी बेटी सरोजनी लाल कहती है "आस-पड़ोस क्या किसी दूर गाँव में भी अगर नाच-गाना, नाटक, लीला तमाशा हो तो दुनिया की कोई ताकत उन्हें नहीं रोक सकती थी। सब के सो जाने पर आप खिसक लेते थे। घर में लोग कहते थे कि यह नालायक है, घर को डुबाकर तबाह कर छोडेगा"[13]। इतना मिलनसार व्यक्तित्व तो अन्यत्र दुर्लभ है।

### 1.3.3 जन्मभूमि के प्रति लगाव -

डॉ. लाल के देहातीपन के बारे में डॉ. गौतम सचदेव कहते हैं कि "लाल का प्रकट शहरीयत और भीतरी ग्रामीणता की द्वैतता समझी जा सकती हैं। वे शहर में आकर भी गाँव या 'अवध' के अंचल से जुडे है; शहर में रहते हैं तो गाँव की मिट्टी में उनके पाँव जमे हैं।"[14] वे चाहे इलाहाबाद, दिल्ली, या विदेश में शहरी परिवेश में रहें हों उनकी इस लंबी यात्रा में वे अपनी धरती और उसके संस्कारों को नहीं भूलें। अपने करियर को बनाने के लिए गाँव की मिट्टी को छोडने का दर्द उन्हें कम नहीं था। लाल शहर में रहते हुए भी साल में तीन-चार बार अपने गाँव आते थे। गाँव में दो-तीन दिन रहते गाँव के लोगों से दोस्तों से बड़ी गहराई से मिलते। उनके सुख-दुखों की खबर लेते तथा उसमें शामिल होते थे। और इसी लिए उनके संबंध में अज्ञेयजी कहते हैं "डॉ. लाल देहाती है और लगातार अजनबी को घूरते हैं। उपन्यासों में भी वह लगातार एक के बाद एक रोचक व्यक्ति सामने लाते हैं, जो इसलिए रोचक है कि गैर है; वह बड़े कुतूहल से उसे देखते हैं, दिखाते हैं।"[15] अतः लाल भले ही लंबे समय तक शहरी वातावरण में रहें हो पर उन्होंने बाहरी चमक-धमक को अपने उपर कभी हवी नहीं होने दिया। सभ्य नागरिक बनने की इच्छा रखनेवाले लाल ने देहाती मिट्टी से मन भर प्यार किया। उस देहाती मिट्टी की गंध, उसके उपर लहरनाने वाली हरियाली, उसके खेत-खलियान से जुडे हुए धूल भरे जीवन में बिखरी हुई मस्ती, रसमयता इन तत्वों के रंग लाल के अंदरूनी व्यक्तित्व के साथ-साथ बाहरी व्यक्तित्व में भी सहज दिखाई देते हैं। ऋतुपर्ण शर्मा उन्हें बहुत सुंदर उपमा देते हुए कहते हैं कि "यह अपनी मिट्टी से उगा हुआ पुरुषवृक्ष है मिट्टी गाँव की है ... पर इसकी जडें अपनी ही धरती से रस लेती है। जडें गहरे अंधकार तक जितनी गई हैं, चली जा रही हैं, इस वृक्ष का विकास उतना ही ऊपर और निरंतर होता जा रहा है।"[16] अतः जिस तरह चिड़ीया आकाश में उडान भरती हैं, लेकिन उसका ध्यान बोसकों में स्थित अपने बच्चे पर रहता है, उसी प्रकार लाल भले ही देश-विदेश में रहें हो उनका ध्यान हमेशा अपने जन्मभूमि पर रहा हैं।

### 1.3.4 मा. गांधी के विचारों का प्रभाव -

डॉ. लाल के व्यक्तित्व पर सबसे अधिक प्रभाव मा. गांधी के विचारों का रहा है। गांधीजी की कर्मठता का, भक्तिभावना का तथा राष्ट्रीय भावना का उनपर हमेशा प्रभाव रहा। वे कहते हैं कि इस राष्ट्र की नस को इस राष्ट्र की राष्ट्रीयता को यदि

किसी ने पकडा है, तो वह गांधी ही थे। उनमें निहित अपने धर्म और ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धा और विश्वास, राष्ट्र की मिट्टी से लगाव, आडम्बरहीन जीवन, औपचारिकताओं से दूर, देहातीपन, सत्य वचन कहने की क्षमता, किसी भी कार्य को अर्थात पैखाना तक धो देने का संकोच नहीं, भूल को स्वीकार करने की क्षमता आदि कार्यों में गांधी के विचारों का प्रभाव उनके जीवन में चिंतन में एवं सृजन में दिखाई देता है। गांधी के वे सारे शुद्ध भारतीय उपकरण ही इस देश को इस राष्ट्र को इसकी राष्ट्रीयता से जोड़ सकेंगे। उन्हें दृढ़ विश्वास था कि भारत को गांधी की ओर वापस मुड़ना होगा।

डॉ. दशरथ ओझा डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल जी पर गांधी विचारधारा का प्रभाव दर्शाते हुए कहते हैं "डॉ. लाल सतत जागरूक, निरंतर अध्ययनरत एवं मेधावी नाटककार हैं। वे युवकों को एक नया मार्ग दिखा रहें है कि अपनी भूल स्वीकार न करना कायरता है, 'ओनील', बैकेट और सात्र की तरह साहसी नाटककार अपनी भूलें स्वीकारने में लज्जा नहीं गर्व का अनुभव करते हैं।"[17]

### 1.3.5 लाल का राजनीतिक चिंतन

डॉ. लाल ने कभी खुलकर राजनीति में हिस्सा नहीं लिया क्योंकि उन्हें राजनीति पसंद नहीं थी। फिर भी अपने समय के साथीयों के कारण उनका सन 1974 से 1979 तक का कुछ समय राजनीति से संबंधित रहा था। लाल उन रचनाकारों में से नहीं थे जिनकी लेखनी किसी सत्ताधारी की गुलाम बनी थी। लाल हमेशा अपने देश की वर्तमान परिस्थिति के प्रति चिंतित रहें। वे कहते हैं यहाँ पर हर आदमी राष्ट्र-राष्ट्रप्रेम की दुहाई देता है, पर जब देश ही कही नहीं दिखता तो राष्ट्र और उसकी राष्ट्रीयता तो बहुत दूर की बात है। राजनीति संबंधी वे कहते हैं "वह राजा ही क्या जो सिंहासन से चिपक जाए।"[18]

डॉ. लाल के राजनीतिक संबंधी विचारों का दर्शन हमें उनके द्वारा लिखे ग्रंथ 'आधी रात से सुबह तक' तथा 'निर्मल वृक्ष का फल' में होता है। 'आधी रात से सुबह तक' में वे कहते हैं "राजनीति में कभी मेरी कोई दिलचस्पी नहीं थी। मैं तब हमेशा यह मानता रहा कि राजनीति की बुनियाद किसी न किसी रूप में हिंसा पर आधारित होती है। राजनीति का लक्ष्य ही सत्ता प्राप्त करना है। जहाँ तक सत्ता की भूख है, वहाँ हिंसा अनिवार्य है। इसलिए दावपेंच राजनीति का एक अस्त्र है, क्योंकि वह विरोधी को परास्त करने के लिए अवश्यक है।"[19] इसमें राजनीतिक चित्रण को अभिव्यक्त करते हुए लाल ने तत्कालीन आपातकाल का सारा विकराल परिवेश को लाल ने सफलता के साथ अभिव्यक्त किया है।

'निर्मूल वृक्ष का फल' इस ग्रंथ में लाल राजनीति संबंधी कहते हैं, "जब तक राज्य समाज के आधीन था, तब तक राजनीति नहीं, राजधर्म था, परंतु जिस समय

से राज्य समाज पर हावी हुआ उस क्षण से राजनीति हुई। जहाँ जितना अभाव होगा, वहाँ उतनी राजनीति होगी। राजनीति का एक मात्र लक्ष है शक्ति हासिल करना।"[20] आज चारों तरफ अधिकार प्राप्ति की होड़ लगी है, परंतु राजनीतिक अधिकार तब तक अपूर्ण है, चाहे वे कितने ही महान क्यो न हो, जब तक उनपर सांस्कृतिक नियंत्रण नहीं, आत्मानुशासन नहीं कोई भी भौतिक अधिकार केवल भ्रष्टाचार, हिंसा और असंतोष को ही जन्म देगा। राजनीति संबंधी लाल कहते हैं "राजनीति एक दर्शन थी मनुष्य को श्रेष्ठ बनाने के लिए। तुम्हारी आज की राजनीति उसी मनुष्य को बरबाद कर सिर्फ वह सत्ता और लग्जरी हथियाने का शॉटकट है।"[21] लाल लिखते हैं कि "अगर हम चाहते हैं राजनीति में से मनुष्य पैदा हो तो राजनीति में से राजतंत्र का नहीं तो लोकतंत्र का उदय होना चाहिए और लोकतंत्र के उदय के लिए धर्मपरक जीवन का निर्माण करना होगा, जिसमें कर्म और कर्तव्य पालन में आनंद होता है। कर्म स्वधर्म से जुडकर सामान्य से विशेष हो जाता है।"[22] लाल के राजनीति संबंधी डॉ. वीणा गौतम कहती है" सरोवर और जल परस्पर पूरक हैं। दोनों एक दूसरे के बिना निरर्थक अप्रासंगिक। सरोवर और जल की परस्पर पूरकता के इस दर्शन द्वारा नाटककार सत्ता और जनचेतना को मूल्यगत आचरण की मर्यादाओं में बांधना चाहता है। दोनों को ही एक-दूसरे का ध्यान रखना होगा। राजा जन के बिना जल विहीन सूखे सरोवर के समान हैं जिसका कोई अर्थ नहीं। जल सरोवर की चेतना है। जनचेतना को भी सरोवर की मर्यादाओं में बंधकर व्यष्टि से समष्टिगत प्रगतिधर्म को निभाना होगा। अन्यथा न ही सरोवर रहेगा और न ही जल, दोनों ही सूख जाएँगे।"[23]

डॉ. लाल की राजनीति संबंधी डॉ. दयाशंकर शुक्ल कहते हैं कि, "तानाशाही लोकतंत्र की देन है। लोकतंत्रीय जनप्रतिनिधि ही अधिकारों को एकीकृत कर तानाशाहा बनता है। वैसे ही जैसे हिरण्यकशिपु हमारी अपनी कमजोरियों से पैदा होता है। यहाँ का निरंकुश राजा अपनी शक्ति से नहीं, हमारी कमजोरियों से बना है।"[24]

### 1.3.6 लाल का धार्मिक चिंतन -

डॉ. लाल को अपने धर्म पर अगाध श्रद्धा और अटल विश्वास था। जो कुछ भी उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ उसका एक मात्र कारण वे धर्म को मानते थे। हम यह भी जानते हैं कि यदि अंग्रेज सबसे ज्यादा किसी बात से डरे थे तो वह था हमारा धर्म। इसीलिए उसने सब से पहले काम इस देश को धर्म से काटने का किया और धर्म के स्थान पर उन्होंने एक बड़ा ही भ्रामक शब्द हमें दे दिया 'संस्कृति'। परंतु यह शब्द हमारे चैतन्य से जुड़ा नहीं। हमारे चैतन्य से जुडा है धर्म। लाल ने कभी ऐसे धर्म में विश्वास नहीं किया जिसे संप्रदाय कहा जाता है। उनका धर्म तो मस्तिष्क

के गहरे अंतरंग में छिपा है। वे ऐसे पूजा-पाठ के आडंबर में धर्म को नहीं अपितु वह धर्म जो हमारे चित्त और चैतन्य से जुडा है। हम उस चैतन्य पूर्ण धर्म से बहुत दूर चले गए वलिग हो गए हैं। उसे तो हमने कर्म-काण्ड और ग्रंथों में ही छोड़ दिया, परंतु धर्म ग्रंथों में नहीं हैं, धर्म है अपने कर्म और आचरण में।"[25] धर्म वह है जो मनुष्य को न्यायपूर्वक जीवन बिताने के लिए हर क्षण जिदा रखे। धर्म हर क्षण चलता हुआ परिवर्तनशील सत्य है।"[26] ऐसे सत्य का ऐसे धर्म का कोई जन्मदाता नहीं हो सकता। जन्म तो संप्रदाय लेता है। इस संबंध में लाल अपने नाटक 'नरसिंह कथा' में कहते हैं कि, "धर्म अजन्मा है, पर संप्रदाय का जन्म होता है, जिसका जन्म नहीं होता वह तो अमृत होता है।"[27]

### 1.3.7 सृजनशील व्यक्तित्व

डॉ. लाल का व्यक्तित्व सृजनशील रहा है वे मानते हैं कि चिंतन अलग है और सृजन अलग है। चिंतन सृजन नहीं हो सकता। चिंतन तो बुद्धि कसी है, और सृजन हृदय करता है। लाल की इस सृजन प्रक्रिया में चित्त और भूमि बडी महत्वपूर्ण है। आज का नाटककार नाटक लिख तो लेता है परंतु रच नहीं पाता। इसलिए नहीं कि उसके पास नाट्य रचना का बीज नहीं परंतु उसे इस चित्त और भूमि का अहसास नहीं कि वह अपने में निहित बीज का प्रस्थापन भारत की भूमि पर कर रहा है या पश्चिमी की भूमि पर। उसके मन-चित्त पर संस्कार तो है भारतीयता के, परंतु वह भूमि खोजता है पश्चिम की। अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों की स्थिति तो और भी खराब है, उनके पास अपना कुछ भी तो नहीं रह गया। भारत तो उनके लिए भूगोल है, हमारे लिए भूगोल नहीं हमारे लिए भारत भूमि है, माँ है, जमीन नहीं। यही भूमि है डॉ. लाल के सृजनशील व्यक्तित्व का मुख्य बिंदु। लाल की सृजन प्रक्रिया एक सजीव प्रक्रिया है। ठीक एक शिशु के सृजन की तरह प्रक्रिया है। प्रायः माना जाता है कि 'मानवीय प्रजनन और साहित्यिक सृजन में बहुत समानता है।"[28]

### 1.3.8 लाल एक कुशल निर्देशक

डॉ. लाल एक कुशल निर्देशक के रूप में भी जानेमाने हस्तियों में से एक हैं। अभिनेता के संबंध यदि अभिनय से है तो निर्देशक का संबंध प्रस्तुति से है। आधुनिक युग में निर्देशक नाट्य प्रस्तुति की रीढ़ की हड्डी है। निर्देशक एक तरफ अपनी निर्देशन कला द्वारा अभिनेता की अभिनय कला को अभिव्यक्ति देता है तो

दूसरी ओर वह अपनी प्रस्तुति द्वारा दर्शक को रंगभूमि के रंग के साथ जोडता है। वह अभिनेता और दर्शक के बीच का सूत्रधार है।

आज का निर्देशक तो इस रंगभूमि पर उतना हावी हो गया है कि न केवल नाटक की प्रस्तुति को अपितु नाटककार को भी अपनी मुट्ठी में बाँधे हुए है। और उसकी नाट्यकृति के साथ मनचाही छूट भी लेता है। लाल कहते थे, "कृति समाज को समर्पित करने के बाद वह समाज की हो जाती है, वह चाहे जैसा उपयोग करें। नाटक को निर्देशक के हाथों में देकर मैं इससे अलग हो जाता हूँ, वह उपयोग किसी की तरह करें। यह उसका अपना उत्तरदायित्व और अधिकार भी।"[29] इस संबंध में डॉ. वर्मा कहते हैं, "डॉ. लाल के नाटकों का वैचारिक धरातल व्यापक था। प्रचलित अर्थों में वे न व्यक्तिवादी थे न प्रगतिवादी, न प्रयोगवादी और न परंपरावादी क्योंकि इन वादों को अपनाने के लिए जिस संकीर्ण किलेबंदी का सहारा लेना पड़ता है वह उनके पास नहीं थी। उनकी लेखनी तो मानव और जीवन के जय की घोषणा करती हुई मानो कह रही है ... "यही आदि है यही अंत है। यही केंद्र है अक्षर है, यही ध्वनि है। इसके अतिरिक्त जो कुछ यही है, वह सब उसी की प्रतिध्वनि हैं।"[30]

### 1.3.9 लाल एक कुशल अभिनेता -

उपन्यासकार कहानीकार नाटककार के साथ-साथ लाल एक कुशल अभिनेता भी रहे हैं। लाल ने 'रक्तकमल', 'व्यक्तिगत', 'सुंदररस', 'यक्षप्रश्न जैसे नाटकों में स्वयं अभिनेता की भूमिका बड़ी कुशलता के साथ साकार की हैं। वे मानते थे कि यदि नाटक दृश्यन बना तो उसकी रचना क्यों? अतः लाल ने अभिनय मंडली तैय्यार की और खुद अभिनेता बने। अभिनय किस कलात्मक अभिव्यक्ति का नाम है यह अभिनेताओं को अपने प्रत्यक्ष अभिनय द्वारा सिखाया, कि बिना आत्मा, हृदय और इमानदारी से शरीर को जोड देने पर अभिनेता होना संभव नहीं। केवल बाल बढा लेना, भीतरी कुण्ठाओं को ढकने के लिए मुखौटों को धारण कर लेना, नशीले पदार्थों का सेवन करना अभिनय कला नहीं। स्वयं की अभिनय कला द्वारा अपने साथ-साथ रसदशा तक दर्शक को ले जाना अभिनय है। लाल के अभिनय कला संबंधी जैनेंद्र कहते हैं "उनका 'व्यक्तिगत' नाटक प्रस्तुत हुआ। मुख्य चरित्र दो ही थे। पुरूष पात्र 'मैं' और स्त्री पात्र 'वह'। 'मैं' की भूमिका में स्वयं लाल सामने है। केवल दो पात्रों के बल पर डेढ दो घण्टे दर्शकों को मुग्धभाव से बांधे रखना आसान काम नहीं। मूल पाठ तो उसके लिए जीवंत होना ही चाहिए। पर अभिनय तद्नुरूप न हुआ तो दर्शक उचट जा सकता है। मुझे विस्मय हुआ कि लाल में इस

दिशा की भरपूर दक्षता भी हैं।[31] इस संबंध में डॉ. वर्मा जी कहते हैं कि, "जीवन की गहराइयों से गुजरते हुए डॉ. लाल उस भूमि तक पहुँचे थे जिसके विषय में उनका कहना था, नाटककार के रूप में मेरी यात्रा बहुत लंबी व विकट रही है। मैं शुरु से ही अपने रंगमंच से बहुत समीप से नहीं बल्कि अपने जीवन की गति से जुडा हुँ।"[32]

### 1.3.10 महाप्रस्थान

डॉ. लाल एक सफल कलाकार, नाटककार, कहानीकार, उपन्यासकार, जीवनीकार, तथा एकांकीकार का अंत 20 नवंबर, 1987 को शुक्रवार के दिन सुबह 11.30 बजे हुआ। उनके महाप्रस्थान संबंधी सुभाष भाटीया कहते हैं, "लाल के महाप्रस्थान से हिंदी नाटक और हिंदी जगत का यह सूर्य अस्त हो गया"[33] वह अभिनेता उस महानिर्देशक की आज्ञा से इस रंगमंच की दुनिया को छोडकर परमात्मा की उस रंगभूमि पर चला गया। लाल के अवसान से ही भारतीय नाट्य साहित्य का अस्त हो गया। वह रचनाधर्मी नक्षत्र जिसने अपनी परंपरा और संस्कृति के प्रति अटूट श्रद्धा के आगे किसी आलोचक की परवाह नहीं की उसका लोप हुआ। उनकी कमी हिंदी साहित्य सदैव महसूस करेगा।

## 1.4 लाल का कृतित्व

### 1.4.1 उपन्यास साहित्य

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल की उपन्यास यात्रा काफी सफल मानी जाती है। लाल के उपन्यासों में विभिन्न समस्याओं का तथा विषयोंका समावेशन हुआ है। उनके उपन्यासों में स्त्री-पुरूष संबंध, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, भ्रष्टनीति, सांप्रदायिकता, आदि का सफलता के साथ निर्वाह हुआ है। अपने कथा साहित्य का विषय कौन-सा भी हो लाल उसे आधुनिकता के साथ चित्रित करने के पक्षधर थे। प्रेम विषय संबंधी वे कहते हैं, अगर प्रेम को भी जीना है तो स्वानुभूति का प्रेम क्यों न जिए। क्यों रानी रूपमती और बजबहादूर बनकर प्रेम को जिए। हम क्यों न वह प्रेम जिए जो उन्मुक्त हो, जिसमें कोई नाम न हो, कोई रिश्ता न हो, बिल्कुल स्त्री और पुरूष, औरत और मर्द का प्रेम। यही प्रेम केवल प्रकृतिगत और आदिम है, ऐसे प्रेम से ही सुंदर सृजन होगा। लाल के साहित्य लेखन संबंधी सवाल करते समय लाल राजेंद्र अवस्थी को मुस्कराते बतलाते हैं कि "नाटक लिखते-लिखते जब थक जाता हुँ तब उपन्यास लिखकर विश्राम करता हूँ। और जब उपन्यास लिखकर थक जाता हूँ तो नाट्य लेखन से विश्राम करता हूँ।"[34] लाल के उपन्यासों में नागरिक एवं देहाती जीवन की सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक विषमताओं की एक कटुता का

आभास मिलता हैं। परंतु इन सब में भी अपनी धरती मिट्टी की सुगंध को पूर्णतः जीना तथा उसके प्रकृतिक प्रेम का अनुभव करना उनके उपन्यासों की विशेषता रही हैं। उनका उपन्यास साहित्य इस प्रकार है।

| अ. क्र. | उपन्यास कृति | संस्करण |
|---|---|---|
| 1. | 'बया का घोसला और साँप' | 1953 |
| 2. | 'धरती की आँखे' | 1955 |
| 3. | 'काले फूल का पौंधा' | 1955 |
| 4. | 'रूपाजीवा' | 1959 |
| 5. | 'मन वृंदावन' | 1970 |
| 6. | 'प्रेम एक अपवित्र नदी' | 1972 |
| 7. | 'अपना-अपना राक्षस' | 1973 |
| 8. | 'बड़ी चम्पा छोटी चम्पा' | 1973 |
| 9. | 'बडके भैय्या' | 1973 |
| 10. | 'हरा समंदर गोपी चंदर' | 1974 |
| 11. | 'श्रृंगार' | 1975 |
| 12. | 'वसंत की प्रतीक्षा' | 1975 |
| 13. | 'देवीना' | 1976 |
| 14. | 'पुरुषोत्तम' | 1983 |
| 15. | 'गली अनारकली' | 1985 |

लाल के उपन्यासों में प्रेम संबंधी सिद्धांत 'श्रृंगार', 'देवीना', 'वसंत की प्रतीक्षा', 'प्रेम एक अपवित्र नदी' तथा 'रूपाजीवा' आदि में मिलते हैं। उनके प्रेम सिद्धांत समाज जगत मान्यताओं से बहुत दूर चले जाते हैं। "उनके उपन्यास की नायिका पत्नी होकर भी कभी वफादारी के दायरे में नहीं रहती। प्रेम एक अनुभूति है, प्रेम एक अहसास है इसे लाल सिद्ध करते हैं।" लाल के उपन्यासों में राष्ट्रीय समस्या भी प्रमुखता से उभर आती हैं। उन समस्याओं के प्रति वें इतने सजग एवं जागरूक है कि वे सभी समस्याओं का पर्दाफाश कर देना चाहते हैं। अतः अपने राष्ट्र से हृदयगत प्यार करना, तथा देश की राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक समस्याओं से जूझना तो लाल जैसे रचनाकार का ही काम है।

### 1.4.2 कहानी साहित्य -

डॉ. लाल एक सफल कहानीकार माने जाते हैं। लाल चाहे नाटककार हो या कहानीकार, या उपन्यासकार हो, उनके सृजन का सबसे बड़ा प्राणतत्व है कथा, यही कथा उनकी 'श्रद्धा' है और उनके पात्र उनका विश्वास। यह 'कथा' ही कभी नाटक, कभी उपन्यास, तो कभी कहानी का शिल्प पहनकर आती है। लाल न केवल कहानीकार ही बने अपितु जिस प्रकार उन्होंने नाटक के साथ-साथ नाट्यचिंतन प्रस्तुत किया उसी प्रकार कहानी सृजन के साथ-साथ उसका शिल्प विधान और कथा दर्शन भी प्रस्तुत किया। नाटककार होते हुए भी उनका डी. फिल, का शोध प्रबंध 'हिंदी कहानियों की शिल्पविधि का विकास' यह कहानी विधा पर ही रहा। अपने शोध प्रबंध में वे कहानी के शिल्प की चर्चा करते हुए लिखते हैं कि "किसी भाव को निश्चित रूप देने के लिए जो विधान प्रस्तुत किए जाते हैं, वही उस काल की शिल्पविधि है। कहानी में यह व्याख्या अनुभूति और लक्ष्य इन दोनों रूपों में अत्यंत स्पष्ट है। कहानी में जिस तरह अनुभूति उसके तत्वों में ढलती है, वही उसकी टेकनीक है। दूर एक निश्चित लक्ष्य अथवा एकांत प्रभाव पूर्ति के लिए कहानी की रचना में एक विधानात्मक क्रिया उपस्थित करनी पड़ती है, वही उसकी शिल्पविधि है।"[36] सन 1949 से लेकर 'साप्ताहिक हिंदुस्तान', 'कल्पना', 'ज्ञानोदय', 'कहानी', 'माया', 'सुप्रभात' आदि भारत भर की विविध पत्र-पत्रिकाओं में उनकी कहानियाँ प्रकाशित होती रही। लाल भी कहानियों में एक तरफ कथ्य एवं शिल्प में एक नवीनता झलकती है, वहाँ दूसरी ओर अवध गाँव की आँचलिकता भी लहरा उठती है।

| अ.क्र. | कहानी संग्रह | संस्करण |
|---|---|---|
| 1. | 'सुने आँगन रस बरसे' | 1960 |
| 2. | 'नए स्वर नई रेखाए | 1962 |
| 3. | 'एक बूँद जल' | 1964 |
| 4. | 'एक और कहानी' | 1964 |
| 5. | 'डाकु आए थे' | 1973 |
| 6. | 'आनेवाला कल' | 1987 |

लाल की कहानियों का आधार 'व्यक्ति' और 'परिवार' रहा है वे निरंतर एक व्यक्ति की तलाश में रहे हैं। यह बात सत्य है कि लाल की कहानियाँ आज के जाने-माने श्रेष्ठ कहानिकारों की कहानियों की तुलना में इतनी श्रेष्ठ नहीं बन पाई,

लेकिन उनकी कहानियों में जो भारतीय जीवन की झलक और ललक पाई जाती है, वह अपने आप में अनूठी है। लाल आधुनिक होते हुए भी पश्चिम की आधार की गई आधुनिकता से कोसों दूर है। आधुनिक जीवन चेतना सापेक्ष सत्य है। "यही जिया और भोगा हुआ सत्य जो लाल के हत्य को अपने एकांत में प्रभावित कर स्पर्श करता रहा, उनकी सहज संवेदनाओं को झंकृत करने लगा, जिसे वे आत्मसात करते रहे। उन्होंने आत्मसात किया कि चेतना प्रबुद्ध हो जाए, प्राण जग जाए। जीवन में कर्म और उत्साह का नया बीज अंकुरित हो उठे।"[37] लाल ने सिर्फ कोरा कहानी लेखन नहीं किया अपितु उसके शिल्प विधान तथा रूपविधान का भी ध्यान रखा। लाल की कहानियों में मुख्यता व्यक्तिगत जीवन तथा पारिवारिक जीवन की प्रमुखता पाई जाती है।

### 1.4.3 नाट्य साहित्य

डॉ. लाल हिंदी साहित्य में एक सफल नाटककार के रूप में ही जाने जाते हैं। लाल को अपने साहित्य लेखन में अन्य विधाओं में से केवल नाट्य विधा ने ही उन्हें प्रसिद्धि के चरम शिखर पर पहुँचाया। यहाँ नाटक के स्थान पर 'नाट्य' का प्रयोग किया है, क्योकि नात्य से उनका तात्पर्य नाटक की पाण्डुलिपि से लेकर दर्शक तक उसे संप्रेषित करने की संपूर्ण प्रक्रिया है। अतः नाट्यकार लाल कहने से उनके व्यक्तित्व में नाटकीय अनुभूति की निजता, कवि हृदय की कल्पना, अभिनेता का उत्साह, तथा निर्देशक की सूक्ष्म दृष्टि का अद्भुत समन्वय मिलता है।"[38]

लाल नाट्य प्रकृति के अच्छे जानकार थे। म्युजिक हो, नृत्य हो, कम्पोजिशन हो, मंच बनाना हो, कलाकार का मेकअप हो, कलाकार का पेहराव हो, विविध डिजाइन हो हर चीज का ज्ञान लाल को बखूबी था। लाल तो नाटक और रंगभूमि को पूर्ण समर्पित नाटककार थे। नाट्यकार लाल नाटककार होने के साथ-साथ अपनी चार महत्वपूर्ण भूमिकाएँ बताते हैं, नाटककार लाल अभिनेता लाल, निर्देशक लाल तथा दर्शक लाल। रंगभूमि के सभी आयामों को ज्ञात रखने के बावजूद भी लाल अपने आपको सर्वप्रथम नाटककार ही मानते थे। यही उनका स्वधर्म था। अतः लाल कहते कि जो मेरा धर्म है मैं उसी में रहूँगा। हम नाटककार हैं, तो नाटक ही लिखेंगे। "हिंदी नाटक के इतिहास में लक्ष्मीनारायण लाल 'मील का पत्थर' है। उनके नाटकों में लाल की अंतपरतें खुद-ब-खुद मनुष्य के अंत बाह्य द्वंद्वों, संघर्षों, कुंठाओं, हसरतों, गाँठों, उलझनों का खनन कर महत्वपूर्ण भूमिका आ जाती है।"[39]

| अ.क्र. | नाट्य कृतियाँ | संस्करण |
|---|---|---|
| 1. | 'आंधा कुआँ' | 1955 |
| 2. | 'मादा कैकटस' | 1959 |
| 3. | 'सुंदररस' | 1959 |
| 4. | 'तीन आँखोवाली मछली' | 1960 |
| 5. | 'सुखा सरोवर' | 1960 |
| 6. | 'दर्पण' | 1961 |
| 7. | 'रक्तकमल' | 1962 |
| 8. | 'रातरानी' | 1962 |
| 9. | 'सूर्यमुख' | 1968 |
| 10. | 'कलंकी' | 1969 |
| 11. | 'मिस्टर अभिमन्यु' | 1971 |
| 12. | 'करफ्यु' | 1972 |
| 13. | 'अब्दुला दिवाना' | 1972 |
| 14. | 'व्यक्तिगत' | 1973 |
| 15. | 'नरसिंह कथा' | 1975 |
| 16. | 'यक्ष प्रश्न' | 1976 |
| 17. | 'एक सत्य हरिचंद्र' | 1976 |
| 18. | 'संस्कार ध्वज' | 1976 |
| 19. | 'सगुण पंछी' | 1976 |
| 20. | 'तोता मैना' | 1977 |
| 21. | 'गंगा माही' | 1977 |
| 22. | 'सब रंग मोहभंग' | 1977 |
| 23. | 'पंच पुरुष' | 1978 |
| 24. | 'राम की लड़ाई' | 1979 |

| | | |
|---|---|---|
| 25. | 'कजरीवन' | 1980 |
| 26. | 'लंका कांड' | 1983 |
| 27. | 'अरूण कमल एक' | 1984 |
| 28. | 'बनाम गुरू' | 1984 |
| 29. | 'मन्नू' | 1984 |
| 30. | 'बलराम की तीर्थयात्रा' | 1984 |
| 31 | 'कथा विसर्जन' | 1987 |

डॉ. लाल के नाट्य जगत के बारे में जयदेव तनेजा कहते हैं, "प्रतिभासंपन्न नाटककार, कल्पनापूर्ण निर्देशक को संपूर्णतः समर्पित लाल के बहुआयामी व्यक्तित्व ने अत्यंत सीमित समय में एक बहुत लंबी रंग-यात्रा तय की है और इनके वैविध्यपूर्ण बहुसंख्यांक नाटकों के विवेचन विश्लेषण के माध्यम से निस्संदेह आधुनिक हिंदी नाटक का इतिहास लिखा जा सकता है।"[40] अतः लाल के नाटकों की विषय परिधि विस्तृत है, उन्होंने अपने नाटकों के लिए व्यक्तिगत जीवन, पारिवारिक जीवन, राजनीति, समाजनीति, आर्थिक विषमता, भ्रष्टाचार, ग्रामजीवन आदि से विषयों का चयन किया है।

### 1.4.4 एकांकी साहित्य -

डॉ. लाल का एकांकी सर्जन के पीछे एकमात्र उद्देश्य था कि, दर्शक को बहुत कम समय में सहज-स्वाभाविक अनुभूति से परिचित करवाना और इसमें लाल भलीभाँति सफल हुए हैं। "श्री लक्ष्मीनारायण लाल का नाम नए हिंदी एकांकीकारों में सुविख्यात है। इन्होंने आप्तकाल में ही अपनी प्रपत्नशीलता से अच्छी ख्याति प्राप्त की हैं। इन्होंने सामाजिक, पौराणिक, राष्ट्रीय और ऐतिहासिक सभी प्रकार के एकांकी लिखकार हिंदी एकांकी साहित्य को समृद्ध किया है। सामाजिक एकांकीयों की दृष्टि से इन पर श्री लक्ष्मीनारायण मिश्र का प्रभाव कहा जा सकता है। उनके समान ही आपने भी सामाजिक समस्याओं को लेकर एकांकीयो की रचना की है। अतः उन्हें समस्या नाट्यकार कहना अधिक उपयुक्त होगा।"[41] नाटक की इस विकास यात्रा की जो सबसे बड़ी बात है वह है रंगमंच और दर्शक को एक सूत्र में पिरोने का अथक, सशक्त एवं प्रामाणिक प्रयास।

| अ.क्र. | एकांकी संग्रह | संस्करण |
|---|---|---|
| 1 | 'ताजमहल के आँसू' | 1945 |
| 2 | 'पर्वत के पीछे' | 1952 |
| 3 | 'नाटक बहुरंगी' | 1961 |
| 4 | 'नाटक बहुरूपी' | 1964 |
| 5 | 'दूसरा दरवाजा' | 1975 |

| | | |
|---|---|---|
| 6 | 'खेल नहीं नाटक' | 1978 |
| 7 | 'नया तमाशा' | 1982 |

लाल इन एकांकी संग्रहों में हमें कथ्य और शिल्प के स्तर पर एक निश्चित विकासयात्रा दिखाई देती हैं। विशेषतः "हिंदी रंगमंच जो भारतेंदु युग के बाद से ही एक बार फिर नाटक और जीवन दोनों से जोडने की जिम्मेदारी से कट गया उसे फिर से एक बार परस्पर संबद्ध करने की एक जिम्मेदारी की कोशिश डॉ. लाल की ओर से की गई है।"[42] यह सत्य उनके एकांकीयों में हमें दृष्टिगत होता है। अतः लाल के एकांकियों की विषय परिधि व्यापक रही है, उन्होंने अपनी एकांकी के लिए व्यक्तिगत जीवन, पारिवारिक जीवन राजनीतिक जीवन, नारी जीवन, ग्राम जीवन, आदि से विषयों का चयन किया है। लाल एकांकीयों में भाषा के स्तर पर वैविध्य है तथा पात्रानुकुल भाषा के कारण लाल की एकांकीया सफल रंगमंचीय एकांकीयाँ बन पाई है। उनमें से प्रमुख है, 'ताजमहल के आँसू', 'मम्मी ठकुराइन', 'मिनार की बाँहें', 'मण्डवे का भोर', 'हाथी घोडा चूहा' तथा 'काफी हाऊस में इंतजार'। अतः लाल का एकांकी साहित्य प्रशंसनीय है। "लाल की एकांकीयों का कथानक कही बिखर नहीं पाया है। सबों में पर्याप्त गति है और प्रभाव उत्पन्न करने की विशेष क्षमता।"[43]

### 1.4.5 जीवन साहित्य -

डॉ. लाल ने हिंदी साहित्य की लगभग सभी विधाओं में सफलता के साथ लेखन किया है। अतः लाल की साहित्य लेखनी से भला जीवनी साहित्य कैसे उपेक्षित रहता। उंन्होंने जीवनी साहित्य लेखन में भी सफलता प्राप्त की है। लेकिन लाल द्वारा लिखित साहित्य की अन्य विधा की तूलना उन्होंने जीवनी साहित्य लेखन में इतनी रुची नहीं दिखाई। लाल के साहित्य लेखन की यह विशेषता रही है कि, हर विधा में उनकी कलम से सृजन कला केवल शिल्प का रूप ही बदलती है, उसके कथ्य और सौंदर्य में कोई अंतर नहीं आता। और इसी बात के कारण उनके उपन्यासों में नाटक-सी सुगंध और महक आती है, तो उनके जीवनी सीहत्य में उपन्यास-सी महक और ताजगी आती है। लाल द्वारा लिखित जीवनी साहित्य की एक और विशेषता यह है कि उनके द्वारा चित्रित जीवनी का पात्र सार्वजनिकता तो प्राप्त करता है हि अपितु वह चरित्र अमरता भी प्राप्त करता है। लाल के जीवन चरित्रों से हम पात्र को जितना अपने समीप पाते हैं उतना ही इनमें से डॉ. लाल का राजनैतिक, सामाजिक तथा धार्मिक दर्शन एवं उनकी सूझ-बूझ का भी परिचय पाते हैं। डॉ. लाल एक अष्टपैलु साहित्यकार हैं इस संबंध में डॉ. रघुवंश कहते हैं कि, "डॉ. लाल बहुमुखी प्रतिभा से संपन्न रचनाधर्मी साहित्यकार है, तथा नाटककार,

कृतिकार, समालोचक और एक स्वतंत्र चिंतक के रूप में पिछले तीन दशक से भी अधिक समय से साहित्य रचना में व्यस्त है।"[44] लाल की कलम ने उपन्यास हो, कहानी हो, नाट्य हो, एकांकी हो तथा जीवनी हो हर एक विधा में अपनी अलगता की झलक दर्शक, पाठक को दिखलाई है।

| अ.क्र. | जीवनियाँ | संस्करण |
|---|---|---|
| 1. | 'जयप्रकाश' | 1974 |
| 2. | 'अंधकार में एक प्रकाश जयप्रकाश' | 1977 |
| 3. | 'स्वराज्य और बनश्यामदास | 1987 |

डॉ. लाल ने अपनी इन जीवनियों में लोकनायक जयप्रकाश नारायण के जीवन चरित्र पर प्रकाश डाला है, तथा स्वातंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले धर्मवीर घनश्यामदास के जीवन चरित्र को अंकित किया है। डॉ. लाल के साहित्य योगदान संबंधी डॉ. रामकुमार गुप्त कहते हैं कि, "डॉ. लाल का कृतित्व विविध पक्षों को लेकर चला है। जिनमें मानव मूल्यों की नूतन स्थापनाएँ मिलती है। बदलते मूल्यों के साथ समाजिक संबंधो और रिश्तों का नया परिपेक्ष्य भी खुला है।"[45] अतः डॉ. लाल की जीनवियाँ सफल तथा प्रभावपूर्ण बनी है, उसमें उन्होंने काफी नपेतुले शब्दों में चरित्रों का अंकन किया है। इस संबंध में नित्यानंद तिवारी कहते हैं कि, "पात्र या चरित्र मात्र अच्छे, या बुरे होकर नैतिकता, अनैतिकता के सिद्धांत नहीं होते, वे परिस्थितियों के दबाव झेलते हुए आशा - निराशा, आकांशा, स्वप्न और भावों - विचारों के जटिल संस्थान होते हैं।"[46]

**निष्कर्ष -**

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल हिंदी साहित्य के एक अष्टपैलु व्यक्तित्व है। लाल अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व में एक बहुमुखी प्रतिभा संपन्न व्यक्ति रहे हैं। गाँव के संघर्षशील परिवेश ने उन्हें जीवनभर संघर्ष की प्रेरणा दी एवं निरंतर संघर्षशील व्यक्तित्व के धनी रहे। जीवन में वे हमेशा ही एक देहाती की तरह सहज एवं स्पष्ट वक्ता के रूप में रहे। लाल पर मा. गांधीजी की विचारधारा का प्रभाव स्पष्टरूप से दिखाई देता है। लाल ने अपने परिवार, गाँव, राष्ट्र और अपनी मिट्टी से जी-जान से प्यार किया, जिसकी गंध उनके साहित्य में बिखरी मिलती है।

साहित्यकार लाल को विविध रूपों में देखने पर हम कह सकते हैं कि साहित्य रचना में उनमें शीघ्रता का गुण अधिक दिखाई देता है, इसलिए श्रेष्ठ रचना बनते-बनते इनके हाथों से छूट जानी थी। अतः यह बात सत्य है कि कथाकार लाल

नाटककार लाल की तरह सशक्त रूप से उभरकर नहीं आए। और न ही वे प्रेमचंद की परंपरा से अपने आप को आगे ले जा सके। फिर भी 'बया का घोंसला और साँप', 'रूपजीवा', 'मन वृन्दावन', 'प्रेम एक अपवित्र नदी', 'कली अनारकली', 'निश्चय', ही कुछ ऐसे उपन्यास हैं जो एक श्रेष्ठ उपन्यासकार के रूप में ला बिठाते हैं। इसी प्रकार 'द्रौपदी' 'सुंदरी' 'गौरा पार्वती' 'सूरत तट का पपीहा' 'थाना वेलूरगंज', तथा 'डोआ डोकी दंतकथा' जैसी कुछ कहानियाँ भी उन्हें सफल कहानीकार के रूप में ला बिठाती है। तथा 'जय प्रकाश', 'अन्वकार में एक प्रकाश : जयप्रकाश' तथा 'स्वराज्य और घनश्याम दास' जैसे जीवन चरित्र लिखकर वे सफल जीवनीकार की बने तो निर्मूल वृक्ष का फल तथा आधीरात से सुबह तक' जैसे ग्रंथों में लाल का राजनीतिक तथा धार्मिक चिंतन उभर कर आया है।

लाल का रचनाकार का रूप सबसे सशक्त रूप में नाट्य विधा में दृष्टिगत होता है। वे सशक्त नाटककार, कुशल अभिनेता, सफल निर्देशक, एवं सुजान दर्शक, सफल समीक्षक के रूप में हमारे सामने आते हैं। वास्तव में वे नाटक की परंपरा और दिशा को नया मोड देनेवाले नाटककार रहे हैं। नाटक और रंगमंच की परंपरा को जोडनेवाले वे स्वातंत्रोत्तर हिंदी नाटक के न केवल सूत्रधार बने अपितु सजग, चिंतनशील, एवं प्रयोगशील प्रहरी भी बने। लाल ने अपने नाटकों को रंगमंचीय नाटक बनाया तथा समय पर अनेक यथार्थवादी, प्रतीभात्मक, मिथकीय, लीलानाट्य, लोकनाट्य तथा रंगभूमि के नाटक आदि के अनेक सफल प्रयोग किए। उनमें कही कमी दिखाई दी तो उनके कथ्य एवं शिल्प में परिवर्तन भी किए। लाल मानते हैं कि रंगभूमि विहीन नाटक कोई नाटक नहीं, रंगभूमि से अलग होकर नाटक लिखा तो जा सकता है, परंतु रचा नहीं जा सकता।

लाल का सृजन पक्ष उतना सशक्त नहीं जितना की रंगदर्शन पक्ष है। हमारे अन्य दर्शनों की तरह नाटक का भी अपना एक दर्शन है, उसे हिंदी साहित्य में हिंदी नाट्य जगत में सबके सामने ले आए। 'रचनाकार लाल की इस रंगयात्रा का रंगदर्शन वास्तव में एक तरफ अगर रंगमंच से रंगभूमि का है तो दूसरी ओर रंगकर्मी से रंगयोगी का भी है। अतः लाल जैसा अष्टपैलु व्यक्तित्व अन्यत्र दुर्लभ है। उनकी कमी को हिंदी साहित्य जगत सदैव महसूस करता रहेगा।

* * *

# संदर्भ सूची


| अ.क्र. | | पृ. |
|---|---|---|
| 1. | डॉ. रघुवंश - कृतिकार लक्ष्मीनारायण लाल | 23 |
| 2. | इलाचंद्र जोशी - मेरा हमदम मेरा दोस्त | 74 |
| 3. | डॉ. सुभाष भाटीया - लक्ष्मीनारायण लाल का रंगदर्शन | 24 |
| 4. | वही | 19 |
| 5. | शीला झुनझुनवाला - लक्ष्मीनारायण लाला व्यक्तित्व एवं साहित्यकार | 13 |
| 6. | डॉ. सुभाष भाटीया - लक्ष्मीनारायण लाल का रंगदर्शन | 21 |
| 7. | शीला झुनझुनवाला - लक्ष्मीनारायण लाल व्यक्तित्व एवं साहित्यकार | 10 |
| 8. | ऋतुपर्ण शर्मा - लाल एक पुरूष वृक्ष | 77 |
| 9. | डॉ. रक्षुवंश - कृतिकार लक्ष्मीनारायण लाल | 11 |
| 10. | डॉ. गिरीश रस्तोगी - हिंदी नाटक सिद्धांत और विवेचन | 33 |
| 11. | डॉ. सुभाष भाटीया - लक्ष्मीनारायण लाल का रंगदर्शन | 24 |
| 12. | डॉ. रघुवंश - कृतिकार लक्ष्मीनारायण लाल | 33 |
| 13. | वही | 43 |
| 14. | गौतम सचदेव - कहानीकार लाल | 164 |
| 15. | डॉ. रघुवंश - कृतिकार लक्ष्मीनारायण लाल | 17 |
| 16. | ऋतुपर्ण शर्मा - लाल एक पुरुष वृक्ष | 108 |
| 17. | डॉ. दशरथ ओझा - आज का हिंदी नाटक प्रगति और प्रभाव | 204 |
| 18. | डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - एक सत्य हरिश्चंद्र | 36 |
| 19. | डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - आधीरात से सुबह तक | 5 |
| 20. | डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - निर्मूल वृक्ष का फल | 7 |
| 21. | डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - मिस्टर अभिमन्यु | 11 |
| 22. | डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - निर्मूल वृक्ष का फल | 25 |
| 23. | डॉ. वीणा गौतम - हिंदी नाटक आज तक | 266 |
| 24. | डॉ. रघुवंश - कृतिकार लक्ष्मीनारायण लाल | 141 |
| 25. | डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - पुरूषोत्तम | 14 |
| 26. | वही | 92 |
| 27. | डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - नरसिंह कथा | 6 |
| 28. | ओम अवस्थी - रचना प्रक्रिया | 7 |
| 29. | जयदेव तनेजा - समकालीन हिंदी नाटक और रंगमंच | 162 |
| 30. | डॉ. दिनेशचंद्र वर्मा - समकालीन हिंदी नाटक एवं नाटककार | 233 |
| 31. | डॉ. रघुवंश - कृतिकार लक्ष्मीनारायण लाल | 13 |
| 32. | डॉ. दिनेशचंद्र वर्मा - समकालीन हिंदी नाटक एवं - नाटककार | 233 |

33. डॉ. सुभाष भाटीया - लक्ष्मीनारायण लाल का रंगदर्शन 22
34. डॉ. रघुवंश - कृतिकार लक्ष्मीनारायण लाल 40
35. डॉ. सुभाष भाटीया - लक्ष्मीनारायण लाला का रंगदर्शन 29
36. डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - हिंदी कहानियों की शिल्प विधि का विकास 3
37. डॉ. सुरेंद्र - नई कहानी दशा दिशा और संभावना 19
38. जयदेव तनेजा - समसामायिक हिंदी नाटकों में चरित्र सृष्टि 135
39. डॉ. विणा गौतम - हिंदी नाटक आज तक 261
40. डॉ. रघुवंश - कृतिकार लक्ष्मीनारायण लाल 79
41. डॉ. रमा सुद - हिंदी एकांकी और एकांकीकार 118
42. नरनारायण राय - नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल की नाट्यसाधना 174
43. डॉ. भुवनेश्वर महतो - हिंदी एकांकी का रंगमंचीय अनुशीलन 281
44. डॉ. रघुवंश - कृतिकार लक्ष्मीनारायण लाल 5
45. डॉ. रामकुमार गुप्त - हिंदी नाटक के प्रमुख हस्ताक्षर 222
46. नित्यानंद तिवारी - आधुनिक साहित्य और इतिहास बोध 96


* * *